13 आज की एक महती अपेक्षा : परिवार-नियोजन

आज प्रायः समग्र ज्ञात विश्व निरन्तर बढ़ती जा रही जनसंख्या से त्रस्त है। पौराणिक कथाश्रुति के अनुसार द्रौपदी के चीर की भाँति जनसंख्या सिमटने में ही नहीं आ रही है। एक युग था कभी, जबकि शत पुत्रवती होने का एक आशीर्वाद था। अब तो यह अभिशाप बन कर रह गया।

हर परिवार, समाज एवं राष्ट्र के पास उपभोग के साधन सीमित हैं। अन्न, वस्त्र, भवन आदि कितने ही निर्मित होते जाएँ, यदि उपभोक्ताओं की संख्या अधिकाधिक बढ़ती जाए, और वह बढ़ ही रही है, तो समस्या का समाधान कैसे होगा? प्रकृति का उत्पादन भण्डार अनन्त नहीं है, आखिर उसके शोषण की भी एक सीमा है।

यही कारण है कि मनुष्य के मन की इच्छाओं की इच्छानुरूप पूर्ति नहीं हो पा रही है। भौतिक दृष्टि की प्रधानता से इच्छाएँ भी मानवीय आवश्यकताओं की रेखा को पार कर बाढ़ के कारण तूफानी नदियों की भाँति मर्यादाहीन अनर्गल गति से इधर-उधर फैलती जा रही हैं। राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं ने मानव मन को सब-कुछ आवश्यक-अनावश्यक पाने के लिए पागल बना दिया है। संयम जैसी कोई बात नहीं है। आखिर संयम की भी एक सीमा है। भूख से बढ़कर कोई वेदना नहीं है। एक प्राचीन महर्षि ने, जो स्वयं के शिखर पर आरूढ़ थे, खुले मन से यथार्थ कथन किया है–**'खुहासमा वेयणा नत्थि'** संस्कृत भाषा में भी एक उक्ति है–'बुभुक्षितः किं न करोति पापम्'–भूखा आदमी कौन-सा पाप नहीं करता? वह सभी पापाचार, दुराचार, अत्याचार, अनाचार कर सकता है। उसे योग्यायोग्य का विवेक नहीं रहता।

जनसंख्या बढ़ती है, तो भूखों की संख्या बढ़ेगी ही। सभी को इच्छानुरूप तो क्या जीवनरक्षानुरूप भोजन भी मिलना कठिन हो जाता है। और, उसका जो परिणाम होता है, वह हमारे सामने है। अखबारों में सुबह-सुबह क्या पढ़ते हैं?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यही चोरी, डकैती, बटमारी, जेबकटी, छीना-झपटी आदि-आदि। इसके साथ ही हत्या, खूनखराबी। साधारण से दो-चार पैसों के लिए मारा-मारी। यह मारामारी अन्यत्र ही नहीं, परिवार में भी हो चली है। अपने ही रक्त से जन्मी संतानें माता-पिता तक की हत्याएँ कर देती हैं, यह खबर आम हो गई है। देश में हर तरफ गुण्डा-तत्त्व बढ़ता जा रहा है, मनुष्य अपनी पवित्र मानवता की तिलांजलि देकर क्रूर दानव बनता जा रहा है।

धर्म परम्पराओं ने काफी समय तक पाप और पुण्य, नरक और स्वर्ग आदि के उपदेशों से मनुष्य को नियंत्रित रखा है। मर भले ही जाएँ, किन्तु अन्याय का एक दाना भी खाना हराम है, पाप है। परन्तु आज ये उपदेश कुछ अपवादों को छोड़कर अपनी गुणवत्ता एवं अर्थवत्ता की पकड़ खो चुके हैं। वे स्वयं भी माया-जाल मे फँस गए हैं। धर्मगुरु, धर्मगुरु नहीं, अर्थगुरु होते जा रहे हैं। अतः स्पष्ट है, संयम की लगाम, मनुष्य के बुभुक्षित पागल मन अश्व को कैसे लग सकती है।

माना कि कुछ अधिक भोगासक्ति भी इन अनाचारों की जननी है। परन्तु यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि पहले मनुष्य बहुत अधिक अपेक्षित आवश्यकता की पूर्ति हेतु कुछ छोटी-मोटी गलतियाँ करता है। फिर धीरे-धीरे वे गलतियाँ जड़ पकड़ लेती हैं, मनुष्य के अन्तर्विवेक को समाप्त कर देती हैं, फलतः मनुष्य संवेदनशीलता से शून्य होकर कुछ का कुछ हो जाता है। और यह सब होता है—अनियंत्रित भीड़ के कारण। ठीक ही लोकोक्ति है 'जो भीड़ में जाए, वह भाड़ में जाए।' वस्तुतः युग की जनसंख्या की बढ़ती भीड़-भाड़ ही हो गई है। भाड़ यानि जलभुनने के लिए दहकती आग।

मनुष्य आखिर मनुष्य है। वह कीटाणु तो नहीं है। जो इधर-उधर धूल-चाटकर, गन्दगी खाकर अपनी छोटी-सी जिन्दगी पूरी कर लेगा, और मर जायेगा, या मार दिया जाएगा। अधिक संख्या में बढ़ते कीटाणुओं के संहार की भी आये दिन सरकारी और गैर सरकारी योजनाएँ बन रही हैं, अधिकता तो कीटाणुओं की भी अपेक्षित नहीं है। इसी तरह मनुष्य की जनसंख्या की अनर्गल वृद्धि से जो एक तरह कीटाणु ही होता जा रहा है, वह विषाक्त कीटाणु। आज का मनुष्य अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। प्रलोभनों का शिकार हो रहा है। और, इस तरह निरपराध अपनी ही जाति के, अपने ही निरपराध मानव भाई की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हत्या कर देता है। अपेक्षा है, यदि इस अपराधवृत्ति को रोकना है, तो जनसंख्या की वृद्धि को सर्वप्रथम रोकना है। अन्यथा, सब धर्म, कर्म, सरकार और उनके कानून धरे-के-धरे रह जाएँगे।

परिवार में एक दिन अतीत में देवी कही जाने वाली नारी मात्र भोग्य वस्तु बन गई है और बन गई है–अनर्गल बच्चे पैदा करने की जीवित मशीन। वह देवीत्व का अपना गौरव खो चुकी है। अधिक बच्चों के कारण उसने अपना दैहिक स्वास्थ्य और सौंदर्य तो खोया ही है। मन का स्वास्थ्य और सौन्दर्य भी खो चुकी है, खोती जा रही है। जैनागम ज्ञातासूत्र की 'बहुपुत्तिया' कथा-नारी के समान अधिक बच्चों के कारण खुद गन्दी रहती है, घर गन्दा रहता है, मोहल्ले और मोहल्लों की गलियां गंदी रहती है। साधारण परिवारों में, जिंनकी ही संख्या अधिक है, बच्चों को न समय पर पौष्टिक भोजन मिलता है, न बीमारी होने पर ठीक तरह चिकित्सा हो पाती है। सरकारी रिपोर्ट है, अकेले भारत में 'ए' विटामिन से सम्बन्धित भोजन के अभाव में पाँच लाख के लगभग बच्चे हर वर्ष अंधे हो जाते हैं।

ज्यों-त्यों करके कुछ बड़े हुए कि इधर-उधर घरेलू कार्यों और होटलों में नौकरी के नाम पर मजदूर बन जाते हैं। ये बाल मजदूर, कानूनी अपराध होते हुए भी लाखों की संख्या में बेरहमी के साथ दिन-रात श्रम की चक्की में पिसते जा रहे हैं, और समय से पहले दम तोड़ देते हैं और कुछ उनमें से घृणित अपराध कर्मी बन जाते हैं। मैंने देखा है, तीर्थ-स्थानों में नन्हे-नन्हे बच्चे भिखारी बने हैं और चन्द पैसों के लिए गिड़गिड़ाते हुए यात्रियों के पीछे-पीछे दूर तक दौड़ते रहते हैं। ये फटेहाल बच्चे, बच्चे क्या, जीवित नर-कंकाल ही नजर आते हैं। दया आती है। इस दया ने कुछ काम भी किया है। पर... पर आखिर दया की एक सीमा है व्यक्ति की परिस्थिति में। और, अब तो यह दया की धारा भी सूखती जा रही है।

जब भरण-पोषण ही ठीक नहीं है, तो शिक्षा-दीक्षा तो एक स्वप्न है। कहाँ पढ़ें, पेट की पढ़ाई पूरी हो, तो आगे कुछ और हो। कितनी ही बार भीख मांगते बच्चों से पूछा है–तुम किसी स्कूल में पढ़ते क्यों नहीं? उत्तर मिला है–बाबा, क्या पढ़ें? हमें पढ़ाई नहीं, खाना चाहिए खाना ! इसका समाधान है कुछ? इतने अधिक स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों के होते हुए भी अनक्षर, अनपढ़,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अशिक्षितों की संख्या कम होने के बजाय, प्रतिवर्ष बढ़ती ही जा रही है। इस बढ़ती का मूल है, जनसंख्या की वृद्धि में।

अभी-अभी समाचार पत्रों में सुप्रसिद्ध समाज शास्त्रियों की एक रिपोर्ट पढ़ने को मिली है। अगले सौ वर्षों के आसपास विश्व की जनसंख्या दश खरब हो जाएगी। क्या होगा तब? भूमि तो बढ़ने से रहीं कहाँ और कैसे रहेंगे इतने लोग? क्या चूहों की तरह धरती के नीचे बिलों में रहेंगे? और, खाएंगे क्या? क्या आदमी, आदमी को खाने के लिए मजबूर हो जाएगा। मजबुरी बूरी है, वह सब करा सकती है। उसे अर्थ या अनर्थ का, भले या बुरे का कुछ अता-पता नहीं है। अत: समय रहते सावधान होने की अपेक्षा है, मानव जाति के हित-चिन्तकों को।

कुछ अधिक सात्विक कहे जाने वाले लोग या धर्म, कहते हैं बढ़ती जन-संख्या को ब्रह्मचर्य के द्वारा नियंत्रण करना ही ठीक है, अन्य साधनों से नहीं। बात अपने में ठीक है। परन्तु हजारों वर्षों से धर्म परंपराएँ ब्रह्मचर्य का, इन्द्रिय संयम का उपदेश देते आ रहे है। परन्तु शून्य ही परिणाम आया है इस उपदेश का प्रत्यक्ष हमारे सामने है। अगर इसकी कुछ प्रभावकता होती, तो क्या इस तरह जनसंख्या बढ़ती? धर्मगुरु एक ओर तो मनुष्य की कामुकता को प्रतिबन्धित करने का उपदेश देते रहे, किन्तु दूसरी ओर क्या कहते रहे यह भी पता है आपको? राजा, महाराजा, श्रेष्ठीजनों के पूर्वजन्म के पुण्य की महिमा के गुणगान में उनके सैकड़ों हजारों पत्नियाँ भी बताते रहे। जिसके पास जितनी अधिक पत्नियाँ वह उतना ही अधिक पुण्यवान ! यह दुमुही बातें क्या अर्थ रखती हैं। मनुष्य की कामवृत्ति ब्रह्मचर्य में न जाकर, इसके विरोधी कामपिपासावर्धक वर्णनों की ओर ही अग्रसर होती रही।

अच्छा है ब्रह्मचर्य से, इन्द्रिय संयम से धर्म के साथ जन-संख्या वृद्धि की समस्या भी हल हो जाए। 'आम के आम गुठली के दाम।' कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु, सर्वसाधारण से अपेक्षा रखना, एक तरह का दिवा-स्वप्न ही है। अत: परिवार-नियोजन के अन्य साधनों का विवेक पूर्वक उचित सीमा में प्रयोग हो, तो कोई आपत्ति नहीं। बहु-विवाह की प्रथा कहीं भी, किसी भी धर्म या जाति में हो, वह बंद होनी ही चाहिए, धर्म विशेष या जाति विशेष के नाम इस तरह की छूट रहना, राष्ट्र को बर्बाद करना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भपात जैसे कृत्य तो भयावह हैं। वे पाप तो हैं, साथ ही नारी जीवन के साथ खिलवाड़ भी हैं। इस तरह अनेक अपने प्राण दे बैठती हैं। गर्भपात की अपेक्षा गर्भनिरोध ही ठीक है। न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी। हर कर्म में लाभ-हानि का ध्यान रखना आवश्यक है। गर्भनिरोध की प्रक्रिया में भी संभवत: कुछ गलत परिणाम आ सकते हैं। परन्तु, इन कुछ गलतियों की कल्पना में सर्वनाश को निमंत्रण नहीं दिया जा सकता। प्राकृतिक चिकित्सा अच्छी है, परन्तु जब वह कारगर न हो, तो अन्य चिकित्सा पद्धतियाँ भी अपनाई जा सकती हैं। मैंने अच्छे-अच्छे प्राकृतिक चिकित्सकों, योगियों, अध्यात्मवादियों और आंग्ल चिकित्सा पद्धति के कट्टर विरोधी धर्म गुरुओं को बड़े-बड़े हॉस्पीटलों में भरती होते और अनाप-शनाप अंग्रेजी एलोपैथिक अभक्ष्य दवाइयाँ खाते देखा है। यही बात अन्तत: परिवार नियोजन की प्रक्रिया में है। समाज कल्याण के लिए, राष्ट्र-हित में समयोचित कदम उठाना पाप नहीं है। पाप है, समयोचित कदम न उठाना।

आप भला मानें या बुरा मानें, मुझे गलत समझे या सही, मेरे अन्तर्मन को जो सही लगा है, वह नि:संकोच मैंने लिखा है। आज कोई भी हो, यदि पूर्वाग्रह एवं व्यर्थ दोषारोपण की वृत्ति से मुक्त होकर सोचेंगे, समझेंगे, विचार करेंगे, तो मुझे पूर्ण नहीं, तो कुछ तो सही पाएँगे ही ! बस, इतनी-सी बात मेरे लिए पर्याप्त है—शेष आनन्द-मंगल !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org